जन्म वि० स १९३७ विजयदशमी

जैन दीक्षा वि० स १९७२

स्थानकवासी दीक्षा वि० स १९६३

मुनिराज श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज।

आनन्द प्रि प्रेस-भावनगर

लोहावटसे ग्राम

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला पुष्प न ९८

श्रीमद्रत्नविजयसद्गुरुभ्यो नमः

अथश्री

समवसरण प्रकरण.

(हिन्दी अनुवाद)

लेखक

मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज.

द्रव्य सहायक

शाहा जीवराज मोहनलाल

मु पाली. (मारवाड)

प्रकाशक

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला.

ओफीस फलोदी (मारवाड)

वीर सं० २४५५ विक्रम स० १९८५

प्रथमावृति १००० ओसवाल सवत् २३८५

धन्यवाद.

श्रीमती केशरबाईने अपने स्वर्गस्थ धर्मपति सहसमलजी के स्मरणार्थ फागण शुद ११ से चैत्र वद ३ तक अठाइ महोत्सव–समवसरण कि दिव्य रचना और शान्ति स्नात्रादि महोत्सव करवा के इस समवसरण प्रकरण मुद्रित करवाने में द्रव्य सहायता प्रदान कर अनंत पुन्योपार्जन किया है इस वास्ते हम सहष श्रीमती केसरबाइ को धन्यवाद देते हैं और भी सज्जनों को हम इस पवित्र कार्यो का अनुकरण करने का अनुरोध करते है कि लक्ष्मी की चञ्चलता समझ के ऐसे सद्कार्योंमें अपनी लक्ष्मी को अमर बनाना चाहिये किमधिकम्

" प्रकाशक "

वाली के वर्तमान ।

वाली एक गोडवाडमें अच्छा आबाद और प्रख्यात कस्बा है। जहां राज महकमें—हुकुमत, हवाला, सायर, अङ्कलात, पुलिस, अस्पताल, स्कूल, और पोष्ट वगेरह का खास इन्तजाम है। आस-पास के गामों के लोगों के गमनागमनसे गाव की आबादीमें और भी वृद्धि दिखाई द रही है। इस कस्ब में कृषक विशेष हैं और व्यापार की हालत साधारण है।

वाली सहर तीन जिनमदिर, महात्माओं की पोसालो, अनेक धर्मशालाओं और गाव के बहार बाग बगिचियों से सुशोभित है।

इस समय पूज्यपाद प्रात स्मरणीय मुनि श्री श्री १००८ श्री श्री ज्ञानसुन्दरजी, गुणसुदरजी महाराज के पधारनेसे जनतामें, धर्मजागृति और उत्साह दिन ब दिन बढता जा रहा है। आपश्री के व्याख्यान की छटा और समझाने की शैली अलौकिक ही है, फिर भी समाज सुधारपर आप का अधिक लक्ष है आप खूब जोर देकर फरमाते हैं कि जैन धर्म एक वीरों का धर्म है, और उन्होंने ही जैन धर्म का रक्षण पोषण कर उन्नति की थी, अतएव आप लोगों को भी चाहिए कि आप अपने शरीर स्वास्थ्य के रक्षण द्वारा वीर बन जैन धर्म को पूर्ण श्रद्धा विश्वासपूर्वक पालन करें। आपश्रीके उपदेश का प्रभाव भी जनतापर काफी पडता है, कारण अव्वल तो आप श्रीमान्

हमारी मरुभूमि के ही हैं, दूसर हमारे आचार व्यवहार, रहन सहन, और कुप्रथा–कुरूढियोंसे आप पूर्णतया परिचित है। तीसरा जनता के चिरकाल का रोग मिटाने के लिए मधुर, और कटुक औषधियों भी आप के पास कम नहीं है, और उनको अनुपान के साथ देने की तजवीज भी आप भली भान्ति जानते हैं। अतएव आप श्री के उपदेशरूपी दवा भव्यात्माओं रूपी मरीजों को इतनी शीघ्र असर करती है कि वाली में आप का कोइ भी उपदेश निष्फल नहीं गया है थोड बहुत प्रमाण में जनतापर जरूर असर हुआ है। जैसे —

(१) महाजनों के घरों में पाणी व सतलोपर सरव न होनेस झूठे पाणी और असख्य प्राणियों क पाप में डूबत हुओं को विमुक्त कर दिए, अर्थात् गाव के लोगोंने सरवे करवा लिए।

(२) मृत्यु क पीछे किए हुए निमत्रणारों (औसरों) में जीमने का भी बहुत लोगोंने परित्याग किया है।

(३) गोडवाड की औरतों व लडकियां गोचर लाने को आन में अपना बडा भारी गौरव समझती है पर आपश्री क उपदेशने छो उनको भी बन्द करवा दिया।

(४) लग्न प्रसग में महाजनों की बहन बटियों मैदानमें ढोल-पर नाचती है और एसे प्रसगपर असभ्य गालियों गाया करती है का भी बहुत सी बहनोंने प्रत्याख्यान किया है।

(५) व्याख्यानमें श्री गयप्पसेनीजी सूत्र बचना प्रारंभ

हुआ उस ममय स्वर्णमुद्रिका, रूपैये, और श्रीफलादि से ज्ञान पूजा हुई, और ज्ञानमें आवद भी अच्छी हुई।

(६) माघ शुक्ल पूर्णिमा के दिन ओसवश स्थापक आचार्य श्री रत्नप्रभसूरिजी महाराज की जयन्ति होनेसे पब्लिक सभा, पूजा प्रभावना, और वरघोडा वड समारोह के माय निकला था।

(७) वाली में मुसलमानों के साई (काटिया) के वहा का दूध प्रायः सब गाववाले मूल्य देकर लाते थे, और खात पीते थे, यह कतई बन्दकर दिया गया है। इतना ही नहीं परन्तु किसनलाल हलवाईने भी मुसलमानों का दूध नहीं लाने की प्रतिज्ञा कर ली है।

(८) रेस्मी कपड जो असख्य कीडों से बनते हैं, उन को पहिनना लोगोंने बद कर दिया। इनके सिवाय और भी बहुत सी बातो का सुधारा हुआ है, अब इन को वाली की जैन जनता कहा तक पालन करगी, यह हम निश्चय रूपसे नहीं कह सक्ते।

आपश्री के विराजने के दरम्यान होली का आगमन हुआ, इस अवसरपर आपश्रीने फरमाया कि छ सास्वती अट्ठाइयों में फाल्गुण अट्ठाई भी एक है, जो फाल्गुण सुद ८ से पूर्णिमा तक रहती है। अगर इस अट्ठाइ का अच्छा महोत्सव किया जाय तो होली जैसे मिथ्या पर्व में अनक जीव धर्मबन्ध करत हैं वह सहज ही में रुक जावे।

इस बात का बीडा भभूतमल गयचदजीने उठाया कि मैं इस बात की दलाली करूगा, बाद जैसा उसने कहा था वैसा ही करके

बतलाया कि शाह सहममलजी आसूजी की धर्मपत्नी व सरवाइन अट्ठाई महोत्सव का सब भार अपने उपर लेनेका वचन दिया जो कि केवल पांचसो सातसो रूपयों का खर्च था। तत्पश्चात् महाराजश्री का उपदेश होता गया और श्रीमती केशरबाई की भावना बढती गइ यहा तक की अट्ठाई महोत्सव के साथ २ समवसरण की रचना, शान्ति-स्नात्र पूजा, और महोत्सव के आखिर दिन स्वामिवात्सल्य करना भी स्वीकार कर लिया। इस कार्य मे विशेष सहायता हसराज व भभूतमल रायचदजी तथा केशरबाइ व भाइ प्रेमचद नथूजी लूणावावाला और इनके निज कुटुम्बी अनोपचदजी गजाजी तथा भीखमचन्दजी और दानमलजी जीवराज विगेरह और इनके जरीए ही सरू से आखिर तक सफलता मिली थी।

जूने मदिरजीमें पाषाणरूप विराजमान चार मूर्तियों का माप लेकर समवसरण की दिव्य रचना की गइ, जैसे तीन गढ उनपर कागरे, दरवाजे, तोरण, सिंहासन, अशोकवृक्ष, ध्वज, और बारह प्रकार की परिषदासे, मानों खास समवसरण का ही प्रतिबिम्ब दिखाई दे रहा था। रगमण्डप की भव्य रचना स्वर्ग की स्मृति करा रही थी और काच के झाड हाडियों गोले बड २ ऐनक (काच) तथा जैनाचार्य श्री मद्विजयानन्द सूरिजी, श्रीविजयवल्भ सूरिजी पन्यासजी ललितविजयजी और मुनि ज्ञानसुदरजी आदि महात्माओ की तस्वीरें उस मण्डप की सुन्दरता में और भी वृद्धि तथा दर्शकों के चित्तको अपनी और आकर्षित कर रही थी।

समवसरण और शान्तिस्नात्र पूजा की विधी विधान के लिए

श्रीमान् यतिवर्य प्रेमसुदरजी फलोदीवाले और जसवन्तसागरजी मुडारावाले को सादर आमत्रण देकर बुलाए थे, आप की शासनसेवा और शातवृत्तिने जनता पर अच्छा प्रभाव डाला था

फाल्गुण शुक्ल ११ को समवसरण मे भगवान की स्थापना करन का शुभ मुहुर्त था। जूने मदिर की मूर्तियों न मिलने पर सर्व धातमय प्राचिन चौविसियों और पच तिर्थियों एव चार प्रतिमा जी को बड ही समारोह के साथ स्थापना करके अठ्ठाइ महोत्सव प्रारभ कर दिया गया। नौपतखाने और बेंड (अग्रेजी) वाजोंने इतना गुलसोर मचाया कि एक वाली के जैन जैनेतर तो क्या पर आसपास के गावो के लोगो को मानों आमन्त्रण ही कर रह थे जिस के जरिए सख्यानद्ध लोग समवसरण स्थित प्रभु दर्शन कर अपने सरल हृदय की उज्वल भावना से जैनधर्म की जयध्वनी के माथ परमानन्दको प्राप्त हो रह थे।

रात्री समय रोशनाई और भक्ती का इतना तो ठाठ लग रहा था कि विशाल धर्मशाला होनेपर भी लोगों को बैठन को तो क्या पर खडा रहने के लिए भी जगह नही मिलती थी, इस लिए प्रभु दर्शन के लिए बहुत से आगत सज्जनों को कुछ दर वहार ठहरना पडता था

इस सु अवसर पर श्रीमान् हाकिम साहब आदि राज्य कर्मचारियोंने भी समवसरण के दर्शन कर अपनी उदारता का परिचय दिया था।

,, ,, ३ सुबह शाह सहसमलजी आसूजी समवसरण रचानेवालों की तरफसे

चैत्र वद ३ शाम को भी शाह महसमलजी आसुजी के वहा पावणो के साथ गाव स्वामीवात्सल्य था ।

गोडवाड में करवा की भी प्रथा है, जो दहीके अदर चावल बादाम, दाखें, इलायची वगेरह डाल कर के अच्छा स्वादिष्ट बनाया जाता है मिष्टान्न जीमने वालों के लिए यह हाजमी पदार्थ और भी फायदेमन्द है इस महोत्सव में पधारे हुए महेमानों के लिए शाह अजे राजजी कोठारी और वजेराजजी गैमावत की तर्फसे करवा का स्वागत हुआ था ।

समवसरण के महोत्सव दरम्यान ४ वरघोडा मय बेंड बाजा और नकार निशान के साथ बड ही धामधूम के साथ चढाए गए थे जिस की भव्य सुन्दरता और जन मरण का फोटू भी लिया गया था ।

वरघोडा मे पधारनेवाले स्वधर्मी भाइयों का स्वागत निम्नलिखीत सज्जनोंने ठडाइ मसाला और सर्कग के पाणी से किया था--

(१) साह भूताजी रायचदजी (२) साह सरदारमलजी मगनाजी । (३) शाह गुणेसमलजी जोगजी तथा नवलाजी चमनाजी (४) शाह जवरमलजी पूनमचदजी

चैत्र वद ३ के दिन को सुबह चैत्य महा पूजा हुई, जिस में शाह सहसमलजी आसुजी के वहा से स्वर्ण मुद्रिका तथा शेठजी

हम पाली के जैन स्वयंसेवकों की सेवाको भी नहीं भूल सके कि जिन्होंने तन तोड कर समाज सेवा का अमूल्य लाभ प्राप्त किया था।

समवसरण के दर्शनार्थी गामान्तर से पधारे हुए स्वधर्मी भाइयों का स्वागत (भोजन वगरह से) निम्नलिखित सद्गृहस्थों की तरफ से हुआ था —

फाल्गुन सुद १२ शाम को साह कसनाजी दवाजी के वहा
,, , १३ सुबह शाह रामचंदजी तारूजी के ,,
,, ,, १३ शाम को साह खुमालजी धूलाजी के ,,
,, ,, १४ सुबह शाह निहालचंदजी श्रीचन्दजीके ,,
,, ,, १४ शाम को शाह भीखाजी दलाजी के ,,
,, ,, १५ सुबह शाह समरथमलजी मेघराजजीके,,
,, ,, १५ शामको मुलतानमलजी सागरमलजीके,,
चैत्र वद १ सुबह शाह प्रेमचंदजी गोमाजी के वहा
,, ,, १ शाम को शाह जीवराजजी हजारीमलजी के वहा
पर विशेषता यह थी कि आपकी तरफ से पावयो के साथ गाव स्वामिवात्सल्य भी हुआ था।

चैत्र वद २ सुबह शाह टकचदजी भूताजी के वहा
,, ,, २ शाम को शाह भूताजी कस्तूरचंदजी के वहा

,, ,, ३ सुबह शाह सहसमलजी आसूजी समवसरण रचानेवालों की तरफसे

चैत्र वद ३ शाम को भी शाह सहसमलजी आसुजी के वहां पावणो के साथ मात्र स्वामीवात्सल्य था।

गोडवाड में करवा की भी प्रथा है, जो दहीके अंदर चावल बादाम, दाखें, इलायची वगैरह डाल कर के अच्छा स्वादिष्ट बनाया जाता है मिष्टान्न जीमने वालों के लिए यह हाजमी पदार्थ और भी फायदेमंद है इस महोत्सव में पधारे हुए महेमानों के लिए शाह अजे राजजी कोठारी और वजेराजजी गैमावत की तर्फसे करवा का स्वागत हुआ था।

समवसरण के महोत्सव दरम्यान ४ वरघोड़ा मय बेंड बाजा और नकार निशान के साथ बड़े ही धामधूम के साथ चढ़ाए गए थे जिस की भव्य सुन्दरता और जन म॰या का फोटू भी लिया गया था।

वरघोड़ा में पधारनेवाले स्वधर्मी भाइयों का स्वागत निम्नलि-खीत सज्जनोंने ठंडाई मसाला और सर्कर के पाणी से किया था—

(१) साह भूताजी रायचंदजी (२) साह सरदारमलजी मगनाजी। (३) शाह गुलेसमलजी जोराजी तथा रवलाजी चमनाजी (४) शाह जवरमलजी पूनमचंदजी

चैत्र वद ३ के दिन को सुबह चैत्य महा पूजा हुई, जिस में शाह सहसमलजी आसुजी के वहा से स्वर्ण मुद्रिका तथा शेठजी

कपूरचंदजी लक्ष्मीचंदजी के यहा से स्वर्ण मुद्रिका और सज्जनों की ओर से सुवर्ण और मुक्ताफल के स्वस्तिक और रूपये श्रीफलों से पूजा हुई करीबन् ३९०) की आमद हुई जिस रकम का कलश करवाना श्री संघ से ठहराव हुवा है। दो पहर को शान्तिस्नात्र पूजा बड़ ही समारोह के साथ भणाइ गई थी जैन जैनेतर लोगों से धर्मशाला चक्कार बद्ध भर गई थी, कार्य बडी ही शांति पूर्वक हुआ। इस सुअवसरपर श्री संघकी ओर से नई बनाई इन्द्रध्वजा की प्रतिष्ठा छब्बीस मण घृत की बोली से शाह जवरमलजी मानमलजी की तरफ से हुई। अन्त में शाह गंगारामजी ताराजी के यहा से श्रीफल की प्रभावना पूर्वक सभा विसर्जन हुई।

इस महोत्सव के अंदर देवद्रव्य में करीबन् १५००) आमद हुई। यह कार्य श्री संघकि सहायता से बड़े ही शान्ति, और धर्मप्रेमके साथ हुआ था और गावमें भी शांति का साम्राज्य वर्त गया था।

चैत्र वद ५ को मुनिश्रीजी, यतिवर्य, और सकल संघ श्री सेसली मंडन प्रभु पार्श्वनाथकी यात्रा करी, यहां श्रीमती केशरबाईकी ओरसे पूजा प्रभावना हुई।

इस पवित्र महोत्सव के कारण बालीमें ही नहीं पर आसपास के गावोंमें जैनधर्मकी खूब ही अच्छी प्रभावना हुई और समाजमें धर्म जागृति के साथ उत्साह बढ रहा है।

चैत्र वद १२ के रोज श्रीमान् पन्यासजी श्री ललितविजयजी महाराज आदी मुनि और वरकाणा विद्यालय के विद्यार्थीमय मास्टरों के

रीश्व् १२९ सख्या में पधार गए, पन्यासजी महाराज का नगर प्रवेश
है ही समारोहसे हुआ, और स्वधर्मियों का स्वागत (भोजन) सुबह
ाह जवाहरमलजी मानमलजी टीकायत क वहा, और शामको शाह
गाराम तालजी की ओर से हुवा था।

वालीमें कइ अर्सो से कुछ कुसम्प था जिसकी शान्ति क
लिए दोनो पार्टी अथात सब गाव वालों की सम्मतिसे एक इकरार
ामा लिख कर मुनिश्रीको दिया है, कि जो आप श्रीमान फैसला
गे वह हम सबको मजूर है, उम्मेद है कि मुनिश्री जो फैसला दगा
उसको सब गाव शिरोद्धार कर गाव में प्रेम एक्यता स कार्य कर
ाति वरतावेंग।

इस समय अधिष्ठायक देवकी वालीपर महरबानी है कि सब
तरहसे आनद मगल वरत रहे है भविष्यके लिए ऐसे ही आनन्द
मगल की आशा करत हुए इस लेखकी समाप्त करता हु। मैं एक
परगाव का आदमी हू, पूछने पर जितनी बातें मुझे मिली, यहा
लिख दी है अगर इसमें कोई त्रुटी रही हो तो आप सज्जन क्षमा
प्रदान करें। किमधिकम।

श्री सघ सेवक,

समवसरणाक दर्शनार्थी आया हुआ

केसरिमल चोरडिया बीलाडावाला

॥ श्री तीर्थंकर भगवान ॥

तीर्थंकर नामकर्मोपार्जन करने के बीस स्थान।

(१) अरिहन्त (२) सिद्ध (३) प्रवचन (४) गुरु (५) स्थविर (६) बहुश्रुति (७) तपस्वी (८) ज्ञानी (९) दर्शन (१०) विनय (११) षडावश्यक (१२) निरतिचार व्रत (१३) उत्तमध्यान (१४) तपश्चर्या (१५) दान (१६) वैयावच (१७) समाधि (१८) अपूर्वज्ञान (१९) सूत्र सिद्धान्तकी भक्ति (२०) मिथ्यात्व को नष्ट करता हुवा शासनकी प्रभावना करना एव बीस स्थान की सेवा पूजा आराधना और अनुकरण करनेसे जीव तीर्थंकर नामकर्मोपार्जन करते है और तीसरे भवमें तीर्थंकर हो जगत् का उद्धार कर सक्ते है

तीर्थंकरोंके पाच कल्याणक

(१) च्यवण कल्याणक (२) जन्म कल्याणक (३) दीक्षा-कल्याणक (४) कैवल्य कल्याणक और (५) निर्वाण कल्याणक। तीर्थंकरो के कल्याणक के दिन धर्म कार्य करना विशेष फलदाता है

तीर्थंकर अष्टादश दोष रहित होते है.

(१) अज्ञान (२) मिथ्यात्व (३) अविरति (४) राग (५) द्वेष (६) काम (७) हास्य (८) रति (९) अरति (१०) भय (११) शोक (१२) दुगच्छा (१३) निद्रा (१४) दानान्तराय (१५) ला

भान्तराय (१६) भोगान्तराय (१७) उपभोगान्तराय (१८) वीर्यान्तराय इन अठारादोष विमुक्त हो वह ही देव समझना—

तीर्थंकर भगवान् १२ गुण सयुक्त होते है

(१) अशोक वृक्ष (२) पुष्प वृष्टि (३) दिव्यध्वनि (४) चामरयुगल (५) स्वर्ण सिंहासन (६) भामण्डल (७) देवदुदुभि (८) छत्रत्रय इनको अष्ट महाप्रातिहार्य कहते है

(९) ज्ञानातिय इसके प्रभावसे लोकालोक के चराचर भावोंको हस्तामलकी माफीक जान सके।

(१०) वचनातिशय ईसके प्रभावसे उनकी वाणि आर्य अनार्य पशु पक्षी आदि सब पर्षदाएं अपनि २ भाषामें समझ के लाभ उठा सके।

(११) पूजातिशय—इसके प्रभावसे तीनलोकमें रहे हुये देव मनुष्य विद्याधरादि सब पुष्पादि उत्तम पदार्थ से तीर्थंकरोंकी पूजा करते है।

(१२) अपायावगमातिशय-इसके प्रभावसे जहा २ आप विहार करते है वहा २ दौर्भिक्षादि किसी प्रकार का उपद्रव उत्पात नहीं होता है

तीर्थंकरोंके चौतीस अतिशय—

(१) प्रभुके रोम केश नखादि वृद्धि को प्राप्त नहीं होत है।

(२) प्रभु का शरीर निरोग रहता है।

(३) प्रभुके शरीर का खून गौदूध सदश होता है।

(४) प्रभुका श्वासोश्वास कमल सदश सुगंधित होता है।

(५) प्रभुका आहार निहार छद्मस्थ देख नहीं सक्ता,

(६) प्रभुके आगे धर्मचक्र चलता है

(७) प्रभुके उपर छत्रत्रय रहता है

(८) प्रभुके उपर चामरयुग उडते है

(९) प्रभुके विराजने को रत्नसिंहासन होता है

(१०) प्रभुके आगे इन्द्रध्वजा चलती रहती है.

(११) प्रभुके साथ अशोकवृक्ष रहता है

(१२) प्रभुके साथ भामण्डल रहता है

(१३) प्रभु जहा २ विचरते है वहा पचवीस २ योजन तक भूमि समान हो जाति है

(१४) प्रभु जहा २ विचरते है वहा पचवीस २ योजन तक काटे सीधे के औंधे अथात् अधोमुख हो जाते है

(१५) प्रभु जहा २ विचरते है वहा पचवीश २ योजन तक ऋतु अनुकुल हो जाति है

(१६) प्रभु जहा २ विचरते है वहा पचवीस २ योजन तक शितल मंद सुगधि वायु से भूमि सुगन्धित हो जाति है.

(१७) प्रभु जहा २ विचरते है वहाँ पचवीस २ योजन तक जल से भूमि शुद्ध पवित्र हो जाति है

(१८) प्रभु जहा २ विचरते है वहा घुटने प्रमाण देवता सुगन्धित पुष्पोंकी वृष्टि करते है

(१९) ,, अशुभ वर्ण गन्ध रस और स्पर्श नष्ट हो जाते है

(२०) ,, शुभवर्ण गन्ध रस और स्पर्श प्राप्त हो जाते है

(२१) प्रभुकी वाणी एक योजन तक सुनाई देती है

(२२) प्रभु नित्य अर्ध मागधी भाषामें देशना देते है

(२३) प्रभुकी भाषा का ऐसा अतीशय है कि आर्य–अनार्य पशुपक्षी आदि सब पषदाए अपनी २ भाषामे बडी आसानी से समझ जाती है

(२४) प्रभुके समवसरण में किसीको वैरभाव नहीं रहता है जो जातिवैर होता है वह भी छूट जाता है

(२५) पर वादि प्रभुके पास आते है वह पहले शीष नमाते है

(२६) शास्त्रार्थ मे वादियों का पराजय होता है

(२७) इतीरोग (तीड्डादि का गिरना) नहीं होता है

(२८) मरी रोग (प्लेग हैजादि) नहीं होता है

(२९) स्वचक्र (राजा) का भय नहीं होता है

(३०) पर चक्र (अन्य देश का राजा) का भय नहीं होता है.

(३१) अतिवृष्टि (अधिक वारिस) नहीं होती है

(३२) अनावृष्टि (बहुत कमवारिस) नहीं होती है

(३३) दुर्भिक्ष दुष्काल नहीं पडता है

(३४) इतीरोग से दुष्काल तक ७ अतिशय बनजाये है वह प्रभु विहार करे वहाँ पचवीस पचवीस योजन तक नहीं होते हैं अगर पहले हुवे हो तो भी प्रभुके पधारणे से नष्ट हो जाते है। यह सब बातें प्रभुक अतिशय के प्रभावसे हुआ करती है कारण उन्होंने पूर्व-भव में वीस स्थानक की आराधना कर ऐसे जबर्दस्त पुन्योपार्जन किये थ कि वह विपाक उदय आने पर पूर्वोक्त प्रभावशाली पुन्यकर्म भी उनको अवश्य भोगवना पडता है

प्रभुके समवसरण

जिस स्थानपर तीर्थंकर भगवान् को कैवल्यज्ञान उत्पन्न होता है वहापर तो देवता अवश्य समवसरण कि रचना करते है और भी जहापर धर्मकी शिथिलता हो व मिथ्यात्व और पाखण्डियों का विशेष जोर शोर हो वहाँपर भी देवता समवसरण की रचना किया करते है जैसे भगवान आदिनाथ क शासनमें आठ समवसरण और परमात्मा महावीर प्रभुके शासनमें बारह समवसरण शेष २२ तीर्थंकरो के शासन में दो दो समवसरण एवं ८–१२–४४ मिलकर सब ६४ समवसरण हुवे थे।

समवसरण रचना का फल—

समवसरण की रचना करनेसे देवता अनन्त पुन्योपार्जन करते है और उत्कृष्ट भावना आने से कभी २ तीर्थंकर नामकर्म भी

उपार्जन कर सकते हैं। अगर कोइ भी प्राणी उस समवसरण की अनुमोदना कर वह भी सम्यक्त्वरूपी रत्न प्राप्त कर अनन्त पुन्य हासल कर सक्ता है इतना ही नहीं पर भवान्तर में तीर्थंकरों के समवसरण का लाभ भी ले सक्ता है।

समवसरण प्रकरण

आवश्यक निर्युक्ति–वृत्ति–चूर्णि आदि शास्त्रोंमें समवसरण का खूब विस्तारसे वरणन है पर बालबोध के लिये पूर्वाचार्योंने प्राकृत भाषामें एक छोटासा प्रकरण रच दिया पर उसका लाभ साधारण ले नहीं सक्ता इस लिये उस का अनुवाद हिन्दी भाषामें बनाके हम हमारे पाठकों के करकमलोंमें रखनेकी चिरकाल से अभिलाषा कर रहे थे उस को आज सफल कर यह लघु प्रकरण आप सज्जनों की सेवामें अर्पण किया जाता है आशा है कि इस उत्तम ग्रन्थको आद्योपान्त पढके समवसरण की भावना रखते हुए भवान्तरमे साक्षात् समवसरण का शीघ्र दर्शन करे यह हमारी हार्दिक भावना है

क्षमा की याचना

छद्मस्थों के अन्दर अनेक त्रुटियोंका रहना स्वाभाविक बात हैं जिसमें भी मेरे जैसे अल्पज्ञ के लिये तो विशेष संभव है और मेरी मातृभाषा मारवाडी होनेसे उन शब्दों का विशेष प्रयोग आपके दृष्टिगोचर होगा तथापि हंस चचुवत् गुण ग्रहन कर अनुचितकी क्षमाप्रदान करे यह मेरी याचना है। शम्।

श्री समवसरण प्रकरण

थुणिमो केवली वन्दं । वर विन्नाणद धम्मतित्य ।
देवींद नय पयत्य । तित्थयर समवसरणुत्थ ॥ १ ॥

भावार्थ—अनतज्ञान अनतदर्शन अनतचारित्र और अनत-वीर्य रूप अभिन्तर लक्ष्मी तथा चौंतिस अतिशय व अष्ट महाप्रतिहार्यरूप बाह्यलक्ष्मी से विभूपीत, समवसरण स्थित धर्मतीर्थंकर धर्मनायक तीथकर भगवान के चरणकमलो में देव देवेन्द्र अर्थात् भवनपति, व्यन्तर ज्योतीषी और वैमानिक देवोंके वृन्द और चौसठ इन्द्रोंने अपना उन्नत मस्तक भूका के वन्दन नमस्काररूप भावपूजा तथा पुष्पादि उतम पदार्थो से करी है द्रव्यपूजा अर्थात् देव देवेन्द्र नर नरेन्द्र और विद्याधरों के समूह से परिपूजित ऐसे तीर्थंकर भगवान् को नमस्कार और स्तवना कर मैं भव्य जीवों के हितार्थ समवसरण का सक्षिप्त वर्णन—स्वरूप को कहूगा ।

पयडिअ समत्यभावो । केवली भावो जिणाण जत्यभावो ।
सोहन्ति सव्वओतहिं । महिमा जोगणमनिलकुमारा ॥ २ ॥

भावार्थ—तीर्थंकर भगवान् अपने केवल्यज्ञान केवल्यदर्शन द्वारा सपूर्ण लोकालोक के सकल पदार्थ को प्रगट हस्तामल की माफीक जाना देखा है उन तीर्थंकरों की विभूतिरूप समवसरण

अर्थात् जिस पवित्र भूमि पर तीर्थंकरो को कैवल्य ज्ञानोत्पन्न होना है वहाँपर देवता समवसरण कि दिव्य रचना करते है। जैसे वायुकुमार के देवता अपनी दिव्य वैक्रिय शक्ति द्वारा एक योजन प्रमाण भूमि मण्डल से तृण काष्ट काट कांकरे कचरा धूल मट्टी वगैरह अशुभ पदार्थो को दूर कर उस भूमि को शुद्ध स्वच्छ और पवित्र बना दिया करते है।

वरसति मेहकुमारा। सुरहिं जल, रिऊसुरकुसुमपसर।
विरयति वण मणि कणय। रयण चित्त महि अल तो॥३॥

भावार्थ—मेघकुमार के देवता एक योजन परिमित भूमि में अपनी दिव्य वैक्रिय शक्ति द्वारा स्वच्छ निर्मल शितल और सुगन्धित जल की वृष्टि करते है जिस से नारिक धूल—रज उपशान्त हो सम्पूर्ण मण्डल में शितलता छा जाती है। और ऋतु-देवता अर्थात् षट् ऋतु के अध्यक्ष देव षट् ऋतु के पैदा हुए पाच वर्ण के पुष्प जो जल से पैदा हुवे उत्पलादि कमल और थल मे उत्पन्न हुए जाइ जूई चमेली और गुलाबादि वह भी स्वच्छ सुगन्धित और ढीच्चण (जानु) प्रमाण एक योजन के मण्डल में वृष्टि करते है और देवता उन पुष्पों द्वारा यथास्थान सुन्दर और मनोहर रचना करते है यथा समवायग सूत्रे

"जलथलय भासुर पभूतेण विठठाविय दसद्धवण्णेण कुसुमेण जाणुस्सेहप्पमाण मित्ते पुप्फोवयारे किज्जई" प्रभु के चौंतीस अतिसय में यह अठारवा अतिशय है।

सिद्धान्तो में जल थल से उत्पन्न हुए पुष्पों का मूल पाठ होनेपर भी कितनेक महानुभाव उन पुष्पों को अचित बतलाते हुए कहते है कि यह पुष्प तो देवता वैक्रिय बनाते हैं। उन मज्ज-नों को सोचना चाहिए कि अगर यह पुष्प देवताओं के वैक्रिय बनाए हुए अचित होते तो शास्त्रकार जल थल से पैदा हुए नहीं कहते। इस से सिद्ध होता है कि समवसरण के अन्दर जो देव-ता पुष्पों की वृष्टि करते हैं वे जल थल से उत्पन्न हुए होनेसे कारण यह पुष्प सचित हैं। अगर कोई सज्जन वनस्पतिकाय के जीवों का बचाव के लिए यह मन घटित कल्पना करले तो उन को सोचना चाहिए कि देवता पुष्प वैक्रिय बनाते है वह अठारा जाति के रत्नों को गृहन कर उन का मथन कर बादर पुद्गलों को छोड कर सुक्ष्म पुद्गलों के पुष्प बनाते हैं तो भी रत्न पृथ्वीकायमय हैं अगर वनस्पति के जीवों से बचोगे तो भी पृथ्वीकाय के जीवों की विराधना माननी पडेगी फिर भी वह वैक्रिय पुष्प एक योजन उपर से बरसने मे भी असख्य वायुकाय के जीवो की विराधना माननी पडेगी, इस से आप के अभिष्ट की तो किसी प्रकार से सिद्धी नहीं होती है फिर शास्त्रों के मूल पाठ को उत्थापन अर्थात् उत्सूत्र परूपना कर अनन्त ससारी बनने मे क्या फायदा हुआ

फिर भी देखिए ' उववाई ' सूत्र में " वन्दणवत्तियाए पूअणवत्तियाए " वन्दना भाव पूजा और पुष्पादि से द्रव्य पूजा करना मूल पाठ है तथा " नन्दी " और " अनुयोगद्वार " मे

" विलुक्त महिया " अर्थात् तीर्थंकर भगवान तीन लोक में पुष्पादिसे पूजित हैं। और उववाई सूत्र मे कोणिक राजाने भगवानके आगमन समय चम्पा नगरी को शृगारी उस समय चारो ओर सुगन्धी जल से सिंचन कर पुष्पों के ढेर और फूलो की मालाओं से नगरी सुशोभित करवादी थी, वहापर तो आप किसी प्रकार से वैक्रिय शक्ती द्वारा या अचित्त कह भी नहीं सके इत्यादि। सूत्रों के मूल पाठ से यह ही सिद्ध होता है कि समवसरण मे जल, थल से पैदा हुए पुष्पों की रचना होती है वह पुष्प सचित है और ऐसा ही मानना मोक्षाभिलाषी जीवों को हितकारी है।

व्यन्तर देव अपनी दिव्य वैक्रिय शक्ती द्वारा मणि—चन्द्रकान्तादि रत्न—इन्द्र नीलादि अर्थात् पाच प्रकार क मणि रत्नो से एक योजन भूमि मण्डल मे चित्र विचित्र प्रकार से भूमि पिठीका की रचना करते हैं।

अभितर मज्झ बहि। ति वप्प मणि रयण कणय कवीसीसा।
रयणज्जुण रय मया। विमाणिय जोई भवण कया।

भावार्थ—पूर्वोक्त पाच प्रकार के मणि रत्नो मे चित्र विचित्र मण्डित, जो एक योजन भूमिका है उसपर देवता समवसरण की दिव्य रचना करते हैं। जैसे—अभींतर, मध्य, और बाहिर एव तीन गढ अर्थात् प्रकोट बना के उनकी भींतो (दिवारों) पर सुन्दर मनोहर कोसी से (कागरों) की रचना करते हैं। जैसे कि—

(१) अभिंतर का प्रकोट रत्नों का होता है, उस पर मणि के कागरे, और वैमानिक देव उस की रचना करते हैं।

(२) मध्य का प्रकोट सुवर्ण का होता है, उस पर रत्नों के कोसी से (कागरे) और ज्योतिषी देव उस की रचना करते हैं।

(३) बाहिर का प्रकोट चादी का होता है, उस पर सोने के कागरे, और उस की रचना भुवनपति देव करते हैं।

इन तीनों प्रकोटों की सुन्दर रचना देवता अपनी वैक्रय-लब्धि और दिव्य चातुर्य द्वारा इस कदर करते है कि जिस की विभूती एक अलौकिक ही होती है, उस अलौकिकता को सिवाय केवली के वर्णन करनेको असमर्थ है।

वट्टमि बत्तीसंगुल । तित्तिस धणु पिहूल पण सय धणुच्च ।
छ धणुसय इग कोस । तग्ग रयण मय चउ दारा ॥ ५ ॥

भावार्थ—समवसरण की रचना दो प्रकार की होती है। (१) वृत–गोलाकार (२) चौरास–जिस में वृताकार समवसरण का प्रमाण कहते हैं कि समवसरण की भींते ३३ धनुष ३२ अगूल की मूल मे पहूली है, ऐसी छ भींते हैं पूर्वोक्त प्रमाण मे गिनती करने से दो सौ धनुप होती है। और वह प्रत्येक भींत ५०० धनुप ऊची होती है।

छे भींते २०० धनुष्य

प्रकोट प्रकोट के अन्तर ७८०० धनुष्यका
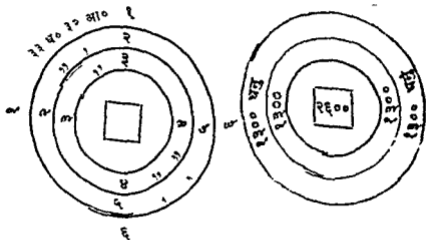
भित और प्रकोट का अन्तर सामिल करने से ८००० धनुष्य अर्थात् एक योजन होता है

अब प्रकोट २ के बीच में अंतर बतलाते हैं कि चादी के प्रकोट और स्वर्ण के प्रकोट के बीच में ५००० सोवाणा अर्थात् पागोतीये होते हैं। प्रत्येक एक हाथ के ऊचे और पहूले होने से १२५० धनुप के हुए और दरवाजे के पास ५० धनुप का परतर (सम जगह) एव १३०० धनुप का अन्तर है। और स्वर्णप्रकोट और रत्नप्रकोट के बीच मे भी पुर्वोक्त १३०० धनुप का अतर है मध्य भाग में २६०० धनुप का मणिपिठ है। और दूसरी तरफ दोनों अन्तर का २६०० धनुप एव २०० । २६००

२६०० । २६०० । कुल ८००० धनुष अर्थात् एक योजन हुआ, और चांदी के प्रकोट के बाहर जो १०००० पगोथिये हैं वे एक योजन से अलग समझना । प्रत्येक गढ के रत्नमय चार २ दरवाजे होते हैं । तथा भगवान के सिंहासन पे भी १०००० पगोथिये होते हैं । भगवान के सिंहासन के मध्य भाग से पूर्वादि चारों दिशाओं मे दो दो कोस का अंतर है वह चांदी का प्रकोट के बाहर का प्रदेशतक समझना । वृत (गोल) समवसरण की परिधी तीन योजन १३३३ धनुष एक हाथ और आठ अंगूल की होती है । इस प्रकार वृत समवसरण का प्रमाण कहा अब चौरास का प्रमाण कहते हैं ।

चोरंसे एग धणु सय । पिहुवप्प सड्ढ कोसं अंतरिया ।
पढम बिय बिय तेय्या कोसंतर पुव्वमि विसेस ॥ ६ ॥

भावार्थ—दूसरा चौरस समवसरण की भाँति सौ २ धनुष की होती है, और चांदी सुवर्ण के प्रकोट का अंतर १६०० धनुष का तथा स्वर्ण व रत्नों के प्रकोट का अंतर १००० धनुष का एव २६०० धनुष दूसरी तरफ तथा २६०० मध्य पीठिका और ४०० धनुष की दिवारें । २५०० । २५०० । २६०० । ४०० । कुल आठ हजार धनुष अर्थात् एक योजन समझना । शेष प्रकोट वगेरे, दरवाजे, पगोतिये वगेरा सर्वाधिकार पूर्वोक्त अर्थात् वृत समवसरण के माफिक समझना ।

सोवाण सहस दसक्कर । पिहुच गंतु सुवोपढम वप्पो ।
तो पना धणु पयरा । तओ अ सोवाण पण सहसा ॥७॥ -

तो बिअ वप्पो पणुम धणु । पयग सोवाण सहसपण तती ।
तईओ वप्पो छ सय । जणु ईग कासेहि तो पिढ ॥ ८ ॥

भावार्थ—अब प्रकोट (गढ) पर चढने के पगोथीयों का वर्णन करते हैं । पहिले गढ में जाने को सम धरती से चांदी के गढ के दरवाजे तक दश हजार पगोथीए हैं, और दरवाजे के पास जाने से ५० धनुष का सम परतर आता है । दूसरे प्रकोट पर जाने के लिए ५००० पाच हजार पगोथीये हैं । दरवाजा के पास ५० धनुप का सम परतर आता है और तीसरे गढ पर जाने के लिये ५००० पगोथिये है । और उस जगह २६०० धनुष का मणिपीठ चौतरा है । उस मणिपीठ से भगवान के सिंहासन तक जाने में भी दश हजार पगोथिए हैं ।

चउदारा तिसोवाण । मज्ने मणि पिढय जिणतणुच्च ।
दो धणुसय पिहु दीह । सड्ढ दुकोसेहिं धरणिपला ॥६॥

भावार्थ—समवसरण के प्रत्येक गढ के चार २ दरवाजे हैं । और दरवाजों के आगे तीन २ सोवाण प्रति रूपक (पगोथीये) है समवसरण के मध्य भाग में जो २६०० धनुप का मणिपीठ पूर्व कहा है उस के ऊपर दो हजार धनुप का लम्बा, चौडा और तीर्थंकरों के शरीर प्रमाण ऊंचा एक मणिपीठ नामक चौतरा होता है कि जिस पर धर्मनायक तीर्थंकर भगवान का सिंहासन रहता है । तथा धरती के तल से उस मणिपीठिका के ऊपर का तला ढाई कोस का अर्थात् धरती से सिंहासन ढाई

रहता है। कारण ५००० । ५००० । १०००० एव बीस हजार सोपान हैं प्रत्येक एक २ हाथ के ऊचे होने से ५००० धनुष का ढाई कोस होता है।

जिण तणु वार गणुच्चो । समहिश्र जोश्रण पिहु श्रासोग तरू ।
तय होइ देवच्छदो । चउ सिंहासण सपय पिढ्ढ ॥ १० ॥

भावार्थ—अब अशोक वृक्ष का वर्णन करते हैं। वर्तमान तिर्थंकरों के शरीर से बारह गुणा और साधिक योजन का लम्बा पहुला जिस अशोक वृक्ष की सघन शीतल और सुगधित छाया है तथा फल फूल पत्रादि लक्ष्मी से सुशोभित है। पूर्वोक्त अशोक वृक्ष के नीचे बड़ा ही मनोहर रत्नमय एक देव छदा है, उसपर चारों दिशा में सपाद पीठ चार रत्नमय सिंहासन हुआ करते हैं।

तदुवारि चउ छत तया । पडिरुवतियतदृश्र अट्ठ चमरधरा ।
पुराश्रो कणाय कुसेसय । ठिअफालिह धम्मचक्क चहू ॥ ११ ॥

भावार्थ—उन चारों सिंहासन अर्थात् प्रत्येक सिंहासन पर तीन २ छत्र हुआ करते हैं, पूर्व सन्मुख सिंहासन पर त्रैलोक्य नाथ तीर्थंकर भगवान विराजते हैं, शेष दक्षिण, पश्चिम, और उत्तर दिशा में देवता तीर्थंकरो के प्रतिविम्ब (जिन प्रतिमा) विराजमान करते हैं। कारण चारों और रही हुई परिषदा अपने २ दिल में यही समझती हैं कि भगवान हमारी ओर ही विराज मान है, अर्थात् किसीको भी निराश होना नहीं पडता है। इस बात के लिए जैनों के किसी भी फिरके का मतभेद नहीं है। सब

लोग मानते हैं कि भगवान चतुर्मुखी अर्थात् पूर्व सन्मुख आप खुद बिराजते हैं । शेष तीन दिशाओं में देवता, भगवान के प्रतिबिम्ब अर्थात् जिन प्रतिमा स्थापन करते है और वह चतुर्विध सघ को वन्दनिक पूजनिक है, जब भगवान के मौजूदगी में जिनप्रतिमा की इतनी जरूरत थी तब गेर मौजूदगी में जिन प्रतिमा की कितनी आवश्यकता हैं, वह पाठकगण स्वय विचार कर सक्ते हैं । कितनेक अज्ञ लोग बिचारे भद्रिक जीवों को बहका देते हैं कि मदिर मूर्तियों बारह काली में बनी है, उन को भी सोचना चाहिए कि जब तीर्थंकर अनादि है, तब मूर्तीपूजा भी अनादि स्वय सिद्ध होती है । कितनेक अज्ञ भक्त यहा तक भी बोल उठते हैं कि यह तो भगवान का अतिशय था कि वे–चार मुख-वाले दिखाइ देते थे, उन महानुभावों को इस पुस्तक के अन्दर जो तीर्थंकरो के ३४ अतिशय बतलाये गए हैं उनको पढना चाहिए कि उस में यह अतिशय है या नहीं ? तो आपको साफ ज्ञात हो जायगा कि यह अतिशय नहीं है पर देवताओं के विराजमान किए हुए प्रतिबिम्ब अर्थात् जिन प्रतिमा है वह जिन तुल्य है, जितना लाभ, भाव जिन की सेवा उपासना से होता है उतना ही उनके प्रतिबिम्ब से होता है ।

ज्जय छत्त मयर मगल । पचालि दम वेई वर कलसे ।
पई दार मणि तोरण । तिय धुव घडी कुणति वणा ॥१२॥

भावार्थ—समवसरण के प्रत्येक दरवाजे पर आकाश में

लहरे खाती हुइ सपरवार मे प्रवृत्त सुन्दर ध्वजा, छत्र, चमर मकरध्वज और अष्टमङ्गलिक यानी स्वस्तिक, श्रीवत्स, नन्दावृत, वर्द्धमान, भद्रासन, कुंभ, कलस, मत्स्ययुगल, और दर्पण एवं अष्ट मंगलिक तथा सुन्दर मनोहर विलास संयुक्त पूतलियाँ पुष्पों की सुगंधित मालाय, वेदिका और प्रधान कलस मणिमय तोरण, वह भी अनेक प्रकार के चित्रों मे सुशोभित है और कृष्णागार धूप घटीए करके सम्पूर्ण मण्डल सुगन्धीमय होतें है यह सब उत्तम सामग्री व्यन्तर देवताओंकी बनाई हुई होती है ।

जोयण सहस दगडा । चउ ज्झया रम्म माण गय सीह ।
कुकुभई जुआ सव्व । माण मिण निय निय करेख ॥१३॥

भावार्थ—एक हजार योजन के उत्तग दड और अनेक लघु ध्वजा पताकाओं मे मण्डित महेन्द्र ध्वज जिस के नाम धर्म ध्वज, माण ध्वज, गज ध्वज, और सींह ध्वज गगन के तलाको उलघती हुई प्रत्येक दरवाजे स्थित रहै । कुकुमादि शुभ और सुगन्धी पदार्थ के भी ढेर लगे हुए रहते है। विशेष समझने का यही है कि जो मान कहा है, वह सब आत्म अङ्गुल अर्थात् जिस जिस तीर्थंकरो का शासन हो उन के हाथों से ही समझना ।

पविसिअ पुव्वाई पहु । पया हिणं पुव्व आसन निविठो ।
पय पीठ ठविअ पाऊ । पणमिअ तित्थ कहइ धम्म ॥१४॥

भावार्थ—समवसरण के पूर्व दरवाजे से तीर्थंकर भगवान समवसरण में प्रवेश करते हैं, प्रदिक्षणा पूर्वक पादपीठ पर पाँव

रते हुए पूर्व मन्मुख सिंहासन पर विराजमान हो सबसे पहिले नमो तित्थस्स " अर्थात् तीर्थको नमस्कार करके धर्मदेशना देते ? अगर कोई सवाल करे कि तीर्थकर तीर्थ को नमस्कार क्यों रते हैं ? उत्तरमें ज्ञात हो कि—

(१) जिस तीर्थसे आप तीर्थकर हुए इस लिए कृतार्थ भाव दर्शित करते हैं। (२) आप इस तीर्थमें स्थित रह कर वीसस्थानक की वाभक्ती आराधन करके तीर्थकर नामगौत्र कर्मोपार्जन किया इस लिये तीर्थ को नमस्कार करते है । (३) इस तीर्थके अदर अनेक तीर्थकरादि उत्तम पुरुष हैं इस लिये प्रत्येक मोक्षगामी अर्थात् तीर्थकर तीर्थ को नमस्कार कर बाद अपनी देशना प्रारभ करते हैं । (४) साधारण जनतामें विनय धर्म का प्रचार करनेके लिये इत्यादि कारणों से तीर्थकर भगवान तीर्थ को नमस्कार करते है ।

मुणि विमाणिणि समणि। स भवण जोईवणदेवीदेवतियं ।
कप्प सुर नर त्थितिय । ठितीगोई विदिसासु ॥ १५ ॥

भावार्थ—देशना सुननेवाली वारह परिषदा का वर्णन करते है, जो मुनि, वैमानिकदेवी, और साध्वी एव तीन परिषदा अग्नि कोण में—भवनपति, ज्योतीषी व्यतर इन की देवियों नैऋत्य कौण में—भवनपति, ज्योतीषी, व्यतर ये तीनों देवता वायव्य कौण, वैमानिकदेव, मनुष्य मनुष्यस्त्रीया एव तीन परिषदा ईशान कौण में । अतएव वारह परिषदा चार विदिशामें स्थित रह कर धर्मदेशना सुनते हैं ।

चउ देवि समणि उठ ठिआ । निविट्ठा नरिरियसुरसमणा ।
इअपण सग परिसासुणति । देसणा पढम वप्पना ॥ १६ ॥

भावार्थ—पूर्वोक्त बारह परिपदा मे चार प्रकार की देवागना और साध्वी एव पांच परिषदा खड़ी रह कर और शेष चार देवता नर नारी और साधु एव सात परिषदा बैठ कर धर्मदेशना सुने। यह बारह परिषदा सब से पहिले, जो रत्नों का प्रकोट है, उस के अन्दर रह कर धर्मदेशना सुनते हैं।

इअआवस्सय वीति वुत । चुन्नियपुणमुणि निविठा ।
विमाणिअ समणी दो । उद्धसेसा ठिआउ नव ॥ १७ ॥

भावार्थ—पूर्वोक्त वर्णन आवश्यक वृति का है। फिर चूर्णीकारों का मत है कि मुनि परिषदा समवसरण में बैठ कर के तथा वैमानिक देवी और साध्वी खड़ी रह कर व्याख्यान सुनती हैं। और शेष नव परिषदा अनिश्चितपने अर्थात् बैठ कर या खड़ी रह कर भी तीर्थंकरों की धर्मदेशना सुन सके। तथा आवश्यक निर्युक्तिकारों का विशेष मत है कि पूर्व सन्मुख तीर्थंकर बिराजते हैं। उन के चरणकमलों के पास अग्निकौन में मुख्य गणधर बैठते हैं और सामान्य केवली जिन तीर्थ प्रत्ये नमस्कार कर गणधरों के पीछे बैठते हैं उन के पीछे मन पर्यवज्ञानी उन के पीछे वैमानिक देवी, और उन के बाद साध्वियों बैठती हैं। और साधु साध्वियों और वैमानिक देवियों एव तीन परिषदा, पूर्व के दरवाजे से प्रवेश हो कर के, अग्निकौन में बैठे। भवनपति व्यन्तर व ज्योतीषियों की देवियों एव तीन परिषदा दक्षिण दरवाजे से प्रवेश

हो कर नैऋत्य कौन में, पूर्वोक्त तीनों देव परिषदा पश्चिम दरवाजे से प्रवेश हो कर वायू कौन में और वैमानिक देव नर व नारी एव तीन परिषदा उत्तर दरवाजे से प्रवेश हो कर के ईशान कौन में स्थित रह कर के व्याख्यान सुने, पर यह खयाल में रहे कि मनुष्यों में अल्पऋद्धी महाऋद्धी का विचार अवश्य रहता है। अर्थात् वह परिषदा स्वय प्रज्ञावान है कि वह अपनी २ योग्यतानुसार स्थानपर बैठ जाते हैं, परन्तु समवसरणमें राग द्वेष इर्षा मान अपमान लेश मात्र भी नहीं रहता है।

निअन्तो तिरि ईसाणि। देव छदाअ जाण तियन्ते।
तह चउरसे दुदु वावि। कोणाओ वावि इक्कि का॥ १८॥

भावार्थ —दूसरे स्वर्ण के प्रकोट मे तिर्यञ्च अर्थात सिंह-व्याघ्रादि, तथा हंस सारसादि पक्षी जाति वैरभाव रहित, शान्त चित मे जिन देशना सुनते हैं। तथा वह इशान कौन में देवरचित देव छंद है। जब तीर्थंकर पहिले पहर में अपनी देशना समाप्त करने के बाद उत्तर के दरवाजे से उस देवछन्दे में पधारते हैं, तब दूसरे पहर में राजादि रचित सिंहासन पर विराज के तथा पाद पीठ पर विराजमान हो गणधर महाराज देशना देते हैं।

तीसरे प्रकोट में हस्ती अश्व सुखपाल जाण रथ वगैरह सवारियाँ रखी जाती हैं, चौरस समवसरण में दो २ और वृतुल में एकेक सुन्दर वापियों (वावडियों) हुआ करती हैं, जिसमें स्वच्छ और निर्मल जल है।

पीअ सिअरत सामा । सुरवण जोई भवणा रयणा वप्पे ।
घणु दएड पास गय हत्था । सोम जय वारुण धणजवा ।१९।

भावार्थ—प्रथम रत्नों के गढ के दरवाजे पर एकेक देवता हाथ में श्रायुध लिए प्रतिहार के रूप में खडे रहते हैं।

(१) पूर्व दिशा के दरवाजे पर सुवर्ण कान्ती शरीरवाला सोमनामक वैमानिक देवता, हाथ में ध्वज लिए खडा रहता हैं।

(२) दक्षिण के दरवाजे पर श्वेत वर्णमय यम नामक व्यन्तर देव हाथ में दण्ड लिया हुआ दरवाजे पर खडा रहता है।

(३) पश्चिम के दरवाजे पर रक्त वर्ण शरीरवाला वारुण नामक ज्योतीषी देव हाथ में पास लिया हुआ खडा रहता हैं।

(४) उत्तर के दरवाजे पर श्याम वर्णमय कुबेर (धनद) नामक भवनपति देव हाथ में गदा लिया हुआ खडा रहता हैं। ये चारों देव समवसरण के रक्षार्थ खडे रहते हैं।

जया विजया जिया अपराजिअति । सिअअरूणपिय निल भा।
बीए देवीज्जुअला । अभयकुस पासमगर करा ॥ २० ॥

भावार्थ—दूसरे सुवर्ण प्रकोटे के प्रत्येक दरवाजे पर देवी युगल प्रतिहारके रूपमे स्थित हैं, जिनके नाम जया, विजया, अजिता, अपराजिता, क्रमशः उनके शरीर का वर्ण श्वेत, अरूण, (लाल) पीत, (पीला) और नीला हाथमें अभय अकुश पास और मकरध्वज, नामके आयुध (शस्त्र) है।

तइअ वर्हिसुरा तुम्बरू । खट्ठंगि कपालि जटमउड धारि ।
पुव्वाइ दारपाला । तुम्बरू देवोअ पडिहारो ॥ २१ ॥

भावार्थ—तीसरे चान्दी के प्रकोट के प्रत्येक दरवाजे पर प्रतिहार देवता होते है जिनके नाम तुम्बरू, खड्गी कपालिक, और जटमुकुटधारी, इन चारो देवताओं के हाथमें छडी रहती है, और शासन रक्षा करना इनका कर्तव्य है।

समाज समोसरणो । एम विही एइ जइ महड्डिसुरो ।
सव्व मिणं एगो विहु । सकुणई भयणे पर सुरेसु ॥ २२ ॥

भावार्थ—तीर्थंकरों के समवसरण का शास्त्रों में बहुत विस्तार से वर्णन है, पर बालबोध के लिए इस लघु ग्रन्थ में सामान्य, (संक्षिप्त) वर्णन किया है। इस समवसरण की देवताओं का समूह अर्थात् इन्द्र के आदेश से चार प्रकार के देवता एकत्र होकर रचना करते हैं। अगर महाऋद्धी सम्पन्न एक भी देवता चाहे तो पूर्वोक्त समवसरण की रचना कर सक्ता है तो अधिक का तो कहना ही क्या ? पर अल्पऋद्धीक देव के लिए भजना है,—वह करे या न भी कर सके।

पुव्व मजाय जत्थओ । जत्थई सुरो महड्डि मघवई ।
तत्थओ सरण नियमा । सयय पुण पाडिहराई ॥ २३ ॥

भावार्थ—समवसरण की रचना किस स्थान पर होती है ? वह कहते हैं कि जहां तीर्थंकरों को कैवल्य ज्ञानोत्पन्न होता

है वहा निश्चयात्मक समवसरण होता है और शेष पहिले जहापर समवसरण की रचना नहीं हुइ हो अर्थात् जहापर मिथ्यात्व का जोर हो अधर्म का साम्राज्य वर्त रहा हो, पाखण्डियों की प्रबल्यता हो, ऐसे क्षेत्र में भी देवता समवसरण की रचना अवश्य करते हैं। और जहापर महाऋद्धिक देव और इन्द्रादि भगवान को वन्दन करने को आते हैं, वे भी देवता समवसरण की रचना करते हैं जिस मे शासन का उद्योत, धर्म प्रचार और मिथ्यात्व का नाश होता है। शेष समय पृथ्वी पीठ और सुवर्णकमल की रचना निरन्तर हुआ करती है।

' दुत्थिअ समत्थ अत्थिअ । जणपत्थिअ अत्थसुसमत्था ।
इत्थ थुओ ल्हु जण । तित्थयरो कुणओ सुपयत्थ ॥

भावार्थ— दुस्थितार्थ समस्त अर्थित जन व सर्व प्राणी प्रार्थित ऐसे अर्थ के लिए समर्थ यानि बालबोध के लिए यहा इस समवसरण द्वारा, स्तवनाकी जो शीघ्र–जल्दी जन प्रति श्री तीर्थंकर भगवान–करो सुपद स्थित अर्थात् हे प्रभु ! हम ससारी जीवोंपर कृपा कर शीघ्र अक्षयपद दीरावे। इति

गोडवाडमें गोवर का गौरव.
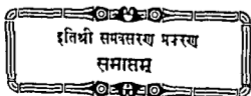
गोडवाड प्रान्त में गोवर का इतना गौरव है कि महाजनों की औरतों के सिवाय, इतर जातियों को तो इस सौभाग्य कार्य का अधिकार तकभी न रहा है, कारण इतर जातियों प्रतिदिन रूपैये आठ आने की मजूरी महनती में कर लेती है। वह दो पैसे का गोवर के लिए बडी इज्जत का काम करना ठीक नहीं समझती है, पर हमारे महाजनों की औरतों मजूरी करने में अपनी इज्जत हलकी मानती है, और गोवर लाने में अपना विशेष गौरव समझती है।

गोडवाड के महाजन लोग भी इतने तो समझदार है कि सालभर में रूपैये दो रूपये का छाणा-बलीता का सहज ही में फायदा कर लेते हैं कारण औरतों घरमें बैठी बैठी करेगी क्या? सीवना पोवना गूथना कातना पसीना विगेरह करे तो उस में बडा भारी कष्ट और पैदास कितनी? इस के बनिस्पत तो दिन में २-२ बार गोवर लाने को जावे तो अलबत पैसे दो पैसे का माल तो जरूर ले आवे। अगर घर में दर्जी बैठा सीलाई करता हो तो उस को मजुरी के सिवाय रोटी खिलाने में तो छाणे अवश्य काम आवेंगें। इस के सिवाय भी गोवर लाने वाली औरतों के गौरव और फायदे की तरफ जरा लक्ष दीजिए —

(१) गोवर लानेवाली औरतों को नित्य नये कपडे चाहि-

नने को मिलते हैं कारण गोबर लाने को जाने वाली औरतों के दुगुने चौगुने कपड़े फटते हैं।

(२) गोबर लाने को जानेवाली औरतों को सालभर में एक दो नये जेवर भी पहिनने को जरूर मिलते हैं। कारण गोबर को जाने वाली एक दो गहने तो सालभर में जरूर गमा देती है।

(३) गोबर लानेवाली औरतों को भूख भी चौगुनी लगती हैं।

(४) गोबर लानेवाली औरतों के छोटे बाल बच्चे हो तो उनको घबराने के दु:खसे भी छुटकारा मिल जाता है क्यों कि गोबर के आगे बच्चों की क्या पर्वाह है।

(५) गोबर को जानेवाली लड़कीयाँ अध्यापिका के बिगर ही टंटा फिसाद लड़ाइयों और असभ्य गालियाँ बोलने में इतनी तो होसीयार हो जाती है कि अगर परीक्षा ली जावे तो सर्टीफिकेट (प्रशंसा पत्र) अवश्य देना पड़े।

(६) गोबर लानेवाली औरतों को स्वच्छंदता सहज ही में मिल जाती है। रात्री में व दिन में किसी टाइममें कहीं जाती हो बह पीछी देरीसे आई हो तो उसको कोई पूछनेवाला नहीं हैं कारण " कमाऊ पुत सब को प्यारा है "।

(७) गोबर लानेवाली औरतों की वाजे २ इज्जत का भी खतरा रहता है इतना ही नहीं पर भविष्य के लिए यह एक व्यभिचार का ठीक रास्ता है।

उपदेशक और मुनिराज कितनाही परिश्रम करें; उपदेश दें पर गोडवाडी लोग अपने चिरकालसे पड़े हुए सस्कार अर्थात् परम्परा को छोड़ने में ये अपनी इज्जत हल्की समझते हैं और जहांतक गोड़वाड़ में अविद्या का साम्राज्य रहेगा वहांतक गोड़वाड़ की औरतों के हाथों में चाहे सोनेके थगड़ी बाजूबद क्यों न हो पर गोबर राजा तो उनके शिरके बालोंपर सवारी की मजा कभी नहीं छोडेगा जो कि कितनेक भोले भाले लोगोंने मुनियों के उपदेश रूपी फदमें आकर के अपनी औरतों को गोबर लाना छुड़वा दिया अर्थात् बड़ेरों की परम्परा को छोड़ दी पर हाल लकीर के फकीरों की भी कमी नहीं है। क्या गोडवाड़ अपने गौरव पर तनिक भी विचार करेंगें ?

इस के अलावा जानने काबिल कइ ऐसी कुरूढिया है कि इस बीसवी शताब्दि के सुधारक जमाना में सिवाय गोडवाड़ के उन का रक्षण पोषण होना मुश्किल है। जरा नमूना के तौर पर देखिये।

(१) महाजन एक दुनिया में बड़ी इज्जतदार कोम है उन की बहन बेटियाँ मैदान के बिच ढोल के डके पर खुब हाव भाव और लटके के साथ नाच करती हैं कि जहाँ अनेक प्रकार के लोग खुब टींग टोगी लगा के देखा करते है उस समय उन दर्शकों के कैसे परिणाम रहते होंगे ? समझ में नहीं आता है कि महाजनोंने इस नाच में अपनी कहांतक इज्जत समझ रखी होगी। अगर कोइ बहनों उपदेशको के सघार में आ कर नाच से इन्कार

होती हो तो हमारी बुजर्ग माताओं उन को हुकम के जरिये जब रम् नचाती है। यह कितना अज्ञान ! अलबत, जमाना कि हवा लगने से कुच्छ सुधारा जरूर हुआ है पर अभीतक गाँवडों में इस रूढि के गुलामों की कमती नहीं है अतएव इस कुरूढि को मिटाना जरूरी है कारण यह एक व्यभिचार का खास रास्ता है।

(२) लग्न सादियों में असभ्य और निर्लज्ज गालियों की प्रथा भी इस प्रान्त में बडी जोर शोर से प्रचलित है यह कइ जगह तो विचारी वैरयाओं को भी सरमाने जैसी गालियों गाई जाति है और उन के बाल बचों के कोमल हृदय पर इतना बुरा असर पडता है कि वह बालब्रह्मचारी के बदले बाल व्यभिचारी बन जाते है। छोटी छोटी बालिकाए रजस्वलाधर्म को प्राप्त हो जाति है इस का भी मुख्य कारण वह खराब गालियों है। बालकों को व्यभिचारी बनाने में उन के घर स्कूल और माताए अध्यापिका है अगर अपने बाल बचों को सदाचारी दीर्घायु और वीर बनाना हो तो सब से पहले इस कुरूढि को जलाञ्जली दे दिजिये। आप के सगा गनायतों और जमाइयो के दील को रंजन ही करना हो तो अपनी बहन बेटियों को सदाचार और वीरता की गालिया सिखाईये कि जिन से आप की सतान सदाचारी और वीर बने।

(३) पाणी के सरबा-गोड़वाड़ में प्राय यह रिवाज है कि जिस लोटा-गीलाससे पाणी पीया हो वह ही लोटा फीर बरतन (माटा) में डाल देवें कि वह सब पाणी झूठा हो जायगा।

जिसके जरिये अनेक प्रकार के चेपी रोग पैदा हो जाते हैं। उस पाणीमें असख्य समुर्च्छिम मनुष्योत्पन्न हो जाते है। अच्छा आदमि उनके यहाँ का पाणी पीनेमें हीचकते है यह ही पाणी गरमकर साधु साध्वियों को दान देते है यह कितना अज्ञान है? अगर किसी जीमणवारमें देखा हो तो भला आदमि वहाँ भोजन करना भी अच्छा नहीं समझते है इत्यादि। यद्यपि उपदेशकों के उपदेशासे इस प्रथामें सुधार हुआ है तथापि जहाँ सरबे नहीं है उनको शीघ्र करवा लेना चाहिये।

(४) महाजनों के न्याति जीमणवारोंमें भी अभी बहुत सुधारा कि जरूरत है। रसोई बनानेवाले ब्राह्मण वगैरह उच्च जातिवान होना चाहिये कि जिसकी बनाई रसोई सब लोग विगर संकोच जीम सके। पुरसगारों के लिये भी अच्छा इन्तजाम हो कि वालेंटर वगैरह ठीक तजवीजसे पुरसगारी करे कि अपनी बहन बेटियों अच्छी इज्जत व योग्यतासर बेठ के भोजन कर ले, विशेष झूठा न रहे। पाणी वगैरह की शुद्धतापर ठीक ख्याल किया जाय

(५) शरीर स्वास्थ्य की ओर गोडवाड़ प्रान्त का लक्ष बहुत कम है जिसमें भी बाल बच्चों की आरोग्यता के लिये तो बड़ा ही अन्धेर है जिसके बालक नहीं है वह तो बाबा, गुसाई, मुल्लापीर या अनेक देवी देवताओं की मान्यता के भ्रममें भ्रमन किया करते है और जिनके बाल बच्चा है वह उनके रक्षण को एक किस्म की वेगार समझते है। धनाड्यों के लडकाओं के शरीर-पर आधासेर सोना मिल जावेंगे पर उनके आरोग्यता का

भी साधन दृष्टिगोचर न होगा बालकों का स्वास्थ्य तो दूर रहा पर यह खुद अपने शरीर की भी परवाह नहीं रखते है। इसी कारण बाल मृत्यु और विधवाओं कि सख्या जितनी इस प्रान्तमें है उतनी स्यात् ही किसी अन्य प्रान्तमें होगी अतएव गेहना कपडा कि निस्वत बालकों के आरोग्यतापर अधिक ख्याल रखना चाहिये कारण इस बालकोपर आप के ससार का आधार है।

(६) कन्याविक्रय भी जितना इस प्रान्त में है ऐसा किसी प्रान्तमे शायद् ही होगा, जो लोग छाने चुपके हजार पाचसौ रूपये लेते थे वह आज चौडे मैदानमें नि शक पचे पाच दश हजार रूपैये लेना तो साधारण बात समझते है। कन्या विक्रय का बजार इतना तो गर्म हो गया कि चालीस पचास हजार तक पहुँच गया इसी कारण से हजारों युवक कुँवारे पितर होते है। आज कल वरविक्रय (डोरा) का बजार भी बहुत तेजी पर जा पहुँचा है। साधारण आदमि तो एकाद लडकि का निवाह में ही अपना सर्वस्व होम देते है। अगर इस दुष्टाचरणोंमें सुधार न किया जाय तो भविष्यमें इसका परिणाम बहुत बुरा होगा। जाति अग्रेसरों को जल्दी स सावचत हो जाना चाहिये।

(७) गोडवाड में पचतीर्थी और पुराणे मन्दिर बहुत है और उनकी सेवा-भक्ति श्रद्धा भी बहुत अच्छी है जिसकी बदो लत ही आज गोडवाड सब तरह से हराभरा (सुखी) है जो कुच्छ त्रुटी कही जाय तो मन्दिर पूजाने कि है कारण गोडवाड के लोग आज कल शेठजी बन बेठे है, आप से न तो भगवान् का

प्रक्षाल होता है न अंगलुणा होता है न देखरेख करने को टाइम मिलता है। कितनेक तो मन्दिर के बाहर खड़े हो दर्शन कर लेते है और कितने क घसी हुई केसर तय्यार मीजले से भगवान् के चरण टीकी लगाके कृतार्थ बन जाते है विधर्मी नौकार पूजारी चाहे कितनी आशातना करे पर परवाह किस कों ? इतनी ही देव-द्रव्य का अशातना (नुकशान) हो रहा है, सोचना चाहिये कि जिसकी बदोलत से हम सुखी हुए है और उनकी ही अशातना होना हमारे लिये कितनी बुरी है। अतएव प्रभुपूजा और देव द्रव्य की सुन्दर विवस्था होना बहुत जरूरी बात है।

(८) विद्या प्रचार—आज भारत के कोने कोने से अविद्या के पांवे उठ गये है पर न जाने गोडवाड से ही अविद्या का इतना प्रेम क्यों है कि वह इसको छोडना नहीं चाहाती है। गोडवाडी लोगों को विद्या की और इतनी तो अरूची है कि एक सौ पाच डिगरी बुखारवाला को जितनी अन्नपर अरूची होती है। फिर भी उपदेशकों के जोर जुलम (परिश्रम) से कितनेक ग्रामोंमे पाठशालाए दृष्टिगोचर होती है पर उनकी देखरेख सारसभाल के अभाव जितना द्रव्य व्यय किया जाता है उतना लाभ नहीं है। इस समय विद्याप्रेमि जैनाचार्य श्रीमद्विजयवल्लभसूरिजी तथा पन्यासजी श्री ललितविजयजी महाराज और कितने ही विद्याभिलाषी गोड़वाड़ के अमेसरों के प्रयत्न से श्री वरकाणा तीर्थ पर ' श्री पार्श्वनाथ जैन विद्यालय ' नामक सस्थाका जन्म हुआ है। हमारे अग्रेसर सज्जन इस आदर्श सस्था कि सेवा

कर दिन ब दिन उत्तेजन देते रहेंगे तो उम्मेद है कि यह सस्था गोडवाड़ का अज्ञान को समूल नष्ट कर अपने दिव्य ज्ञान का प्रकाश डाल गोडवाड़ का जरूर उद्धार करेंगी पर हमारे गोड वाड़ी भाइयों को इतना से ही सतोप कर नहीं बैठ जाना चाहिये जैसे लड़कों के लिये विद्यालय कि स्थापना कि है वैसे ही एक लड़कियों के लिये भी महा विद्यालय कि अत्यावश्यक्ता है कारण जहाँतक भावि माताओं को शिक्षा न दि जाय वहाँतक उनका घर और भावि सतान का सुधार न होगा, अतएव कन्याशाला कि भी गोडवाड़ में सब से पहले जरूरत है। किमधिकम् ।

(६) अच्छूतों कि गाडियों वगैरह कइ कइ ऐसी बातें है कि जिसका परित्याग करना बहुत जरूरी बातें है

आपका

" शुभचिंतक. "